अध्ययन सामग्री
बी॰ ए॰ पार्ट 3
प्रश्नपत्र - पञ्चम
डॉ॰ मालविका तिवारी
सहायक प्राध्यापक
संस्कृत विभाग
एच॰ डी॰ जैन कॉलेज
वी॰ कुं॰ सिं॰ वि॰, आरा

09.09.20

यजुर्वेद की विषय-वस्तु

वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत यजुः का सामान्य अर्थ गद्य है। भिन्न-भिन्न विद्वानों ने इसकी परिभाषा भिन्न ढंग से दी है पर आशय सभी का समान है। 'यजुष्' की कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

1) अनियताक्षरावसानो यजुः - जिसमें अक्षरों की संख्या निश्चित न हो वह 'यजुः' है।

2) गद्यात्मको यजुः - गद्यात्मक मन्त्र 'यजुष्' कहलाते हैं। 'शेषे यजुः' का तात्पर्य भी यही है कि ऋग्वेद और सामवेद के नियत अक्षर वाले मन्त्रों से अलग गद्य मन्त्र 'यजुः' है।

संहिताओं की चर्चा के बीच यज्ञ-प्रक्रिया में आवश्यक चार पुरोहितों की चर्चा की गयी है। इन पुरोहितों में 'अध्वर्यु' नामक पुरोहित के लिए आवश्यक मन्त्रों का संकलन यजुर्वेद संहिता में मिलता है। महाभाष्यकार पतञ्जलि ने यजुर्वेद की 101 शाखाओं की चर्चा की है। लेकिन अब तक यजुर्वेद की पाँच शाखाएँ उपलब्ध हुई हैं।

1) काठक शाखा 2) कठ कापिष्ठल शाखा 3) मैत्रायणी शाखा
4) तैत्तिरीय शाखा - इसे आपस्तम्ब शाखा भी कहते हैं।
5) वाजसनेयी संहिता - इसे माध्यन्दिन शाखा या शुक्ल यजुर्वेद भी कहते हैं।

उपर्युल्लिखित शाखाओं में क्रम से प्रथम चार शाखाएँ कृष्ण-यजुर्वेद से सम्बन्धित हैं। पाँचवीं शाखा शुक्ल-

यजुर्वेद की है, जिसका प्रचार आजकल उत्तर भारत में अधिक है। यजुर्वेद की ये दोनों संहिताएँ कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद विषय-वस्तु की दृष्टि से अभिन्न होते हुए भी स्वरूप की दृष्टि से भिन्न है। शुक्ल यजुर्वेद में केवल मन्त्रों का संकलन है जबकि कृष्ण-यजुर्वेद में गद्य और मन्त्र दोनों ही मिश्रित हैं।

यजुर्वेद की समस्त शाखाओं में वाजसनेयी संहिता ही प्रसिद्ध है और इसके अध्ययन से हमें यजुर्वेद के वर्ण्य विषय का सम्यक् ज्ञान हो जाता है। वाजसनेयी संहिता में कुल 40 अध्याय हैं जिनमें अन्तिम 15 अध्याय विशेषरूप से प्रसिद्ध होने के कारण अवान्तरयुगीय माने जाते हैं। अध्यायों के अनुसार विषय-वस्तु का विभाजन इस प्रकार है —

आरम्भ के दोनों अध्यायों में दर्श और पौर्णमास इष्टियों से सम्बद्ध मन्त्रों का वर्णन है। तृतीय अध्याय में अग्निहोत्र तथा चातुर्मास्य (चार महीनों पर होने वाले यज्ञ) के लिए उपयोगी मन्त्रों का विवरण है। चौथे से आठवें अध्याय तक के मंत्र सोमयाग से सम्बन्धित हैं। इन अध्यायों में अग्निष्टोम का विस्तृत वर्णन है। इसमें सोम (एक लता विशेष) के रस को निचोड़ कर अग्नि में आहुति दी जाती है। सोम निचोड़ने की क्रिया 'सवन' कहलाती थी। समय के अनुसार यह 'सवन' भी तीन प्रकार का होता था - प्रातः सवन, मध्याह्न सवन, सायंकाल होने वाला सवन। इन सवनों के माध्यम से पूर्ण किया जाने वाला यज्ञ 'एकाह' कहलाता था। 'एकाह सोमयागों में 'वाजपेय' अन्यतम है। राजा के अभिषेक के अवसर पर होनेवाला 'राजसूय' यज्ञ है, जिसमें द्यूत-क्रीडा, अस्त्र-क्रीडा, आदि नाना राजन्योचित क्रियाकलापों का विधान होता है। इन दोनों यज्ञों के सम्बद्ध मन्त्र संहिता के नवम तथा दशम अध्यायों में निर्दिष्ट किए गए हैं।

यज्ञों के लिए वेदी का निर्माण एक आवश्यक अंग था। यज्ञीय वेदी का निर्माण विशिष्ट स्थान से लायी गयी, विशिष्ट आकार की 10800 ईंटों से होता था। इनकी आकृति पंख फैलाए हुए उड़ने के लिए तैयार पक्षी के रूप में होती थी। इस वेदी-निर्माण

से सम्बन्धित मन्त्रों का संकलन 11-18 वें अध्याय में विस्तार से किया गया है। 16 वाँ अध्याय 'शतरुद्रिय होम' से सम्बन्धित है इसमें रुद्र की कल्पना अत्यन्त विशद है। वैदिकों में यह 'रुद्राध्याय' अतीव उपयोगी होने से नितान्त प्रख्यात है। 18वें अध्याय में 'वसोर्धारा' सम्बन्धी मन्त्र निर्दिष्ट है।

19वें से 21वें अध्याय तक 'सौत्रामणीयाग' से सम्बन्धित मन्त्र हैं। इस याग के अवसर पर सुरापान आवश्यक समझा जाता था - 'सौत्रामण्यां सुरां पिबेत्'। इस यज्ञ के सन्दर्भ में एक कथा की उद्भावना की गयी है - अधिक सोमपान करने से इन्द्र रोगी हो गया, अश्विनों ने इस यज्ञ द्वारा इन्द्र की चिकित्सा की। महीधर भाष्य में इस यज्ञ की सार्थकता का भी निर्देश किया गया है। 'राज्य से च्युत राजा पशुकाम यजमान तथा सोमरस की अनुकूलता से पराङ्मुख व्यक्ति के निमित्त इस यज्ञ का अनुष्ठान विहित है।

22 वें से 25वें अध्याय तक अश्वमेध यज्ञ से संबंधित मंत्र हैं, ऐश्वर्य एवं सार्वभौम राज्य सुख प्राप्त करने के इच्छुक राजाओं के लिए इस यज्ञ का विधान किया गया है। अश्वमेध सार्वभौम आधिपत्य के अभिलाषी सम्राट् के लिए विहित है। इसका सांगोपांग वर्णन शतपथ ब्राह्मण के 13वें काण्ड में तथा कात्यायन श्रौतसूत्र (20वें अध्याय) में है। इसी प्रसंग में वह प्रसिद्ध प्रार्थना (22/22) उपलब्ध होती है, जिसमें यजमान अपने भिन्न-भिन्न पदार्थों के लिए उन्नति तथा वृद्धि की कामना करता है। 26-29 अध्याय तक खिलमन्त्रों का संकलन है, जिसमें पूर्व निर्दिष्ट अनुष्ठानों के विषय में नवीन मन्त्र दिए गए हैं।

वाजसनेयी संहिता का 30वाँ अध्याय 'पुरुषमेध' यज्ञ से सम्बन्धित है। इसमें 184 पुरुषों के आलम्भन (बलि) का निर्देश किया गया है। यह आलम्भन वास्तव में आलम्भन न होकर केवल प्रतीकरूप में उल्लिखित है। भारत में कभी भी पुरुषमेध नहीं किया जाता था। यह केवल काल्पनिक यज्ञ है, जिसमें

पुरुष की नाना प्रतिनिधिभूत वस्तुओं के लिए भिन्न-भिन्न पदार्थों में दान का विधान था, जैसे नृत के लिए सूत की, गीत के लिए शैलूष की, धर्म के लिए समाचार आदि के आलम्भन की विधि है। इस अध्याय से तत्कालीन प्रचलित व्यवसाय, पेशा तथा कलाकौशल का भी यत्किञ्चित् परिचय प्राप्त होता है। पुरुष मेध यज्ञ में प्रतीकात्मक रूप में यजमान व पुरोहित कुछ ऐसी वस्तुओं का स्पर्श करते थे, जिनमें जीवित वस्तुओं का प्रतीकात्मक आरोप कर दिया जाता था। यह यज्ञ अश्वमेध यज्ञ से भी अधिक महत्त्वपूर्ण और फलदायक माना जाता था। परन्तु यह कभी होता भी था इसमें बहुत अधिक सन्देह है। ओल्डेनबर्ग इस यज्ञ के विषय में लिखते हैं —

There can be no doubt that the ritual is a mere priestly invention to fill up the apparent gap in the sacrificial system which provided no place for man.

इसके विपरीत प्रो० हिलब्राण्ट 'पुरुषमेध' को वास्तविक रूप से नरबलि प्रधान यज्ञ मानते हैं उनका कथन है —

There can be no doubt that human sacrifices occurred in ancient India though not in Brahmanical cult only survivals of it can be traced in the rite of building the brick altar for the fire and in the Sunahsep legend - just as cruel human sacrifices occured even in modern times among certain sects. But this does not prove that the Purusamedha was such a sacrifice.

इस प्रकार 'पुरुषमेध' की स्थिति में लगभग सभी विद्वानों को सन्देह रहा है। इसके सन्दर्भ में आया हुआ 'आलम्भन' शब्द ही मूल विवाद का कारण है। इसके दो अर्थ किए जाते हैं एक तो बलि और दूसरा स्पर्श।

इस संहिता का ७ वाँ अध्याय ऋग्वेद के पुरुष सूक्त (१०/९०) से सम्बन्धित है। इसमें ऋग्वेद के मन्त्रों से ७ मन्त्र

अधिक है। इसका पाठ पुरुषमेध यज्ञ के अवसर पर किया जाने का विधान है। मनुष्य को यहाँ परम और आदिम शक्ति माना गया है। 32 वें तथा 33 वें अध्याय में 'सर्वमेध' के मन्त्र उल्लिखित है। यह सर्वश्रेष्ठ यज्ञ माना जाता है। इसमें यजमान अपनी सारी सम्पत्ति को ब्राह्मणों में दान दे देता है और स्वयं वन में जाकर शेष जीवन तपस्या में व्यतीत करता है। 34 वें अध्याय के आरम्भ में 6 मन्त्रों का 'शिवसंकल्प उपनिषद्' (तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु मन तथा उसकी वृत्तियों के स्वरूप बतलाने में नितान्त उपादेय है। मन की महत्ता के प्रतिपादन के अनन्तर मन को 'शिवसंकल्प' होने की प्रार्थना है, जिससे उसका संकल्प (इच्छा) सर्वदा कल्याणकारी बने — (यजुः 34/6)

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्
नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥

35 वें अध्याय में पितृमेध का वर्णन है। 36 वें अध्याय से 39 वें अध्याय तक प्रवर्ग्य याग का वर्णन है। इस यज्ञ से यज्ञी अग्नि पर एक पतेली या कड़ाही को गर्म करके लाल किया जाता है जिससे वह सूर्य का प्रतीक हो जाता है। पुनः उसमें दूध उबालकर उसे आश्विन को अर्पित किया जाता है। अन्त में यज्ञ-पात्रों को इस प्रकार रखा जाता है कि वह मानव की आकृति बन जाती है। अन्तिम अध्याय 'ईशावास्य उपनिषद्' है, जो अपने प्रारम्भिक दो शब्दों के कारण यह नाम धारण करता है। उपनिषदों में यह लघुकाय उपनिषद् आदिम माना जाता है क्योंकि इसे छोड़कर कोई भी अन्य उपनिषद् संहिता का भाग नहीं है। उपनिषद् ग्रन्थों में इसके प्राथम्य धारण करने का यही मुख्य हेतु है।

शुक्ल यजुः में जहाँ केवल मन्त्रों का ही निर्देश किया गया है, वहाँ कृष्णयजुः में मन्त्रों के साथ तद्विधायक ब्राह्मण भी संमिश्रित हैं।

कृष्णयजुः की तैत्तिरीय संहिता का विषय शुक्ल यजुर्वेद में वर्णित विषयों के समान ही पौरोडाश, याजमान, वाजपेय, राजसूय

आदि नाना यागानुष्ठानों का विशद वर्णन है। कृष्ण यजुर्वेद की अन्यतम शाखा मैत्रायणी की यह संहिता गद्यपद्यात्मक है अर्थात् अन्य कृष्ण यजुर्वेदीय संहिताओं के समान यहाँ भी मन्त्र तथा ब्राह्मणों का सम्मिश्रण है। इस संहिता में चार काण्ड हैं — I) प्रथम (आदिम) काण्ड — II प्रपाठकों में विभक्त है, जिनमें क्रमशः दर्शपूर्णमास, अध्वर, आधान, पुनराधान, चातुर्मास्य तथा वाजपेय का वर्णन है। द्वितीय काण्ड के 13 प्रपाठकों में काम्य, इष्टि, राजसूय तथा अग्निचिति का विस्तृत विवरण है। तृतीय काण्ड के 16 प्रपाठकों में अग्निचिति, अध्वर, विधि, सौत्रामणी के अनन्तर अश्वमेध का विस्तृत वर्णन अन्तिम पाँच प्रपाठकों में किया गया है। चतुर्थ काण्ड खिल काण्ड के नाम से विख्यात है जिसके 14 प्रपाठकों में पूर्वनिर्दिष्ट राजसूय आदि यज्ञों के विषय तथा अन्य आवश्यक सामग्री संकलित की गयी है।

कठ संहिता 5 खण्डों में विभाजित है — इठिमिका, मध्यमिक, ओरमिका या ज्यानुवाक्या, अश्वमेधाप्यवचन। जहाँ तक विषय-वस्तु का प्रश्न है अन्य संहिताओं की भाँति इसमें भी कोई नवीनता नहीं है। कृष्ण यजुर्वेद की चारों मन्त्र संहिताओं में केवल स्वरूप की ही एकता नहीं है, प्रत्युत उनमें वर्णित अनुष्ठानों तथा तन्निष्पादक मन्त्रों में भी बहुत अधिक साम्य है।

यजुर्वेद में कुछ एकाक्षर मन्त्र हैं जिनका अर्थ आजतक ज्ञात नहीं हो सका है, किन्तु उनका पवित्र मन्त्रों के रूप में प्रयोग होता रहा है। इनमें स्वाहा, स्वधा, वषट्, फट्, ओम् आदि हैं। ओ३म् के साथ तीन महाव्याहृतियाँ हैं — भूर्भुवः स्वः। मैत्रायणी संहिता में इनके सम्बन्ध में कहा है कि ये महाव्याहृतियाँ ही ब्रह्म हैं, ये ही सत्य हैं, ये ही ऋत हैं, इनके बिना कोई भी कार्य सम्पादित नहीं हो सकता। स्वाहा और स्वधा शब्द क्रमशः देवों एवं पितरों को दी जानेवाली आहुतियों के लिए प्रयुक्त होता है।

यजुर्वेद में अचेतन वस्तुओं में चेतनता का आरोप किया गया है। यजुर्वेद में पुरोहित राज्याभिषेक के समय पृथ्वी

से कहता है कि "हे मातः ! तू मेरी हिंसा मत कर, मैं तुम्हारी हिंसा न करूँ ।" इसी प्रकार युप को सम्बोधित करते हुए कहता है कि "तू साँप मत बनो, नाग मत बनो ।" इसी प्रकार अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ सर्वत्र अचेतन में चेतन का व्यवहार परिलक्षित होता है । यजुर्वेद में कुछ प्रहेलिकाएँ भी हैं जिनमें अध्यात्मतत्त्व का वर्णन है । वाजसनेयी संहिता में 'होता' कहता है कि ~~अकेला~~ कौन चलता है ? बार-बार कौन जन्म लेता है ? हिम की औषधि क्या है ? और कौन स्थिर है ? अध्वर्यु इसका उत्तर देता है कि "सूर्य अकेला चलता है, चन्द्रमा बार-बार जन्म लेता है, हिम की औषधि अग्नि है और पृथ्वी स्थिर है ।

यजुर्वेद में अनेक आध्यात्मिक विचारधाराएँ प्राप्त हैं, जिनके अध्ययन की आज बहुत आवश्यकता है । विश्वबन्धुत्व की भावना है कि हम सभी को मित्र की दृष्टि से देखें - 'मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे -' इस मन्त्र से स्पष्ट प्रतिपादित है । इस संसार में कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की कामना करें । आत्मा का विकास हमारे जीवन का लक्ष्य है । इस प्रकार वैदिक धर्म एवं दर्शन के समझने के लिए यजुर्वेद का अध्ययन आवश्यक है ।